

२९. कडारपिङ्गस्य कथा ।

नत्वारहतं जगत्पूतं भारतीगुरुपङ्कजम् । वक्ष्ये कडारपिङ्गस्या-ब्रह्मदोषं कथानकम् ॥१॥
 कांपिल्यनगरे राजा नरसिंहो विचक्षणः । प्राज्यं राज्यं करोत्युच्चैर्धर्मकर्मपरायणः ॥२॥
 तन्मन्त्री सुमतिर्नाम्ना धनश्रीः प्राणवल्लभा । तयोः कडारपिङ्गख्यः पुत्रो जातोतिलम्पटः ॥३॥
 तत्रैव नगरे श्रेष्ठी संजातोत्यन्तधार्मिकः । सुधीः कुबेरदत्ताख्यो दानपूजाविराजितः ॥४॥
 तस्य भार्याभवत्सार-पूर्वपुण्येन संयुता । प्रियंगुसुन्दरी नाम्ना साध्वी सद्रूपमण्डिता ॥५॥
 एकदा तां समालोक्य श्रेष्ठिनीं गुणशालिनीम् । कुधीः कडारपिङ्गोसौ संजातो विकलाशयः ॥६॥
 गत्वा गृहं स्थितो याव-द्धनश्रीः प्राह तं प्रति । अहो पुत्र त्वकं कस्माद् दृश्यते दुर्मनास्तराम् ॥७॥
 तेनोक्तं श्रेष्ठिभार्यासौ प्राप्यतेऽत्र मया यदि । तदा मे जीवितं मात-नान्यथेति सुनिश्चितः ॥८॥

२९. कडारपिंग की कथा

अर्हन्त, जिनवाणी और गुरुओं को नमस्कार कर, कडारपिंग की, जो कि स्वदारसन्तोषव्रत-ब्रह्मचर्य से भ्रष्ट हुआ है, कथा लिखी जाती है। कांपिल्य नाम का एक प्रसिद्ध शहर था। उसके राजा का नाम नरसिंह था। नरसिंह बुद्धिमान् और धर्मात्मा थे। अपने राज्य का पालन वे नीति के साथ करते थे। इसलिए प्रजा उन्हें बहुत चाहती थी ॥१-२॥

राजमन्त्री का नाम सुमति था। इनके धनश्री स्त्री और कडारपिंग नामक एक पुत्र था। कडारपिंग का चाल-चलन अच्छा नहीं था। वह बड़ा कामी था। इसी नगर में एक कुबेरदत्त सेठ रहता था। यह बड़ा धर्मात्मा और पूजा, प्रभावना करने वाला था। इसकी स्त्री प्रियंगुसुन्दरी सरल स्वभाव की, पुण्यवती और बहुत सुन्दर थी ॥३-५॥

एक दिन कडारपिंग ने प्रियंगुसुन्दरी को कहीं जाते देख लिया। उसकी रूप-मुधरिमा को देखकर इसका मन बेचैन हो उठा। यह जिधर देखता उधर ही इसे प्रियंगुसुन्दरी दिखने लगी। प्रियंगुसुन्दरी के सिवा इसे और कोई वस्तु अच्छी न लगने लगी। काम ने इसे आपे से भुला दिया। बड़ी कठिनता से उस दिन वह घर पर पहुँच पाया। उसे इस तरह बेचैन और भ्रम बुद्धि देखकर इसकी माँ को बड़ी चिन्ता हुई उसने इससे पूछा-कडार, क्यों आज एकाएक तेरी यह दशा हो गई? अभी तो तू घर से अच्छी तरह गया था और थोड़ी ही देर में तेरी यह हालत कैसे हुई? बतला तो, हुआ क्या? क्यों तेरा मन आज इतना खेदित हो रहा है? कडारपिंग ने कुछ न सोचा अथवा यों कह लीजिए कि सोच विचार करने की बुद्धि ही उसमें न थी। यही कारण था कि उसने, कौन पूछने वाली है, इसका भी कुछ ख्याल न कर कह दिया कि कुबेरदत्त सेठ की स्त्री को मैं यदि किसी तरह प्राप्त कर सकूँ, तो मेरा जीना हो सकता है। सिवा इसके मेरी मृत्यु अवश्यंभावी है। नीतिकार कहते हैं कि काम से अन्धे हुए लोगों को धिक्कार है जो लज्जा और भय रहित होकर फिर अच्छे और बुरे कार्य को भी नहीं सोचते।

धिवकामान्धजनॉल्लोके लज्जाभयविवर्जितान्। यतः कामी न जानाति कार्याकार्यं शुभाशुभम् ॥९॥
तया धनश्रिया प्रोक्तं स्वभर्तुः सुमतेस्तदा। निजपुत्रमहादुःखं परस्त्रीदर्शनोद्भवम् ॥१०॥
तच्छ्रुत्वा सुमतिर्मन्त्री पापात्मा कपटेन सः। नरसिंहमहीनाथं संजगाविति दुष्टधीः ॥११॥
अहो महीपते रत्न-द्वीपे किंजल्कपक्षिणः। तिष्ठन्ति बहवो देव भवद्भिः श्रूयतां प्रभो ॥१२॥
तत्प्रभावान्महाव्याधि-दुर्भिक्षमरणादयः। शत्रुचक्रं तथा चोराः प्रभवन्ति न निश्चयात् ॥१३॥
ततः कुबेरदत्तोसौ श्रेष्ठी कार्यविचक्षणः। तं पक्षिणं समानेतुं प्रेषणीयो न संशयः ॥१४॥
तत्समाकर्ण्य भूभर्ता तमानेतुं सुमुग्धधीः। श्रेष्ठिनं प्रेषयामास राजानो मन्त्रिणां वशाः ॥१५॥
तदा श्रेष्ठी विशुद्धात्मा गृहमागत्य वेगतः। प्रयाणं स्वस्य भार्यायै संजगाद महाद्भुतम् ॥१६॥
प्रियंगुसुन्दरी प्राह भो स्वामिन्वञ्चितोसि च। पापी कडारपिंगो मे महाशीलस्य खण्डनम् ॥१७॥

बेचारी धनश्री पुत्र की यह निर्लज्जता देखकर दंग रह गई वह इसका कुछ उत्तर न देकर सीधी अपने स्वामी के पास गई और पुत्र की सब हालत उसने उनसे कह सुनाई। सुमति एक राजमंत्री था और बुद्धिमान् था। उसे उचित था कि वह अपने पुत्र को पाप की ओर से हटाने का यत्न करता, पर उसने इस डर से, कि कहीं पुत्र मर न जाए, उल्टा पापकार्य का सहायक बनने में अपना हाथ बँटया। सच है, विनाशकाल जब आता है तब बुद्धि भी विपरीत हो जाया करती है। ठीक यही हाल सुमति का हुआ। वह पुत्र की आशा पूरी करने के लिए एक कपट-जाल रचकर राजा के पास गया और बोला-महाराज, रत्नद्वीप में एक किंजल्क जाति के पक्षी होते हैं, वे जिस शहर में रहते हैं वहाँ महामारी, दुर्भिक्ष रोग, अपमृत्यु आदि नहीं होते तथा उस शहर पर शत्रुओं का चक्र नहीं चल पाता और न चोर वगैरह उसे किसी प्रकार की हानि पहुँचा सकते हैं और महाराज, उनकी प्राप्ति का भी उपाय सहज है। अपने शहर में जो कुबेरदत्त सेठ हैं; उनका जाना आना प्रायः वहाँ हुआ करता है और वे हैं भी कार्यचतुर इसलिए उन पक्षियों के लाने को आप उन्हें आज्ञा कीजिए। अपने राजमंत्री की एक अभूतपूर्व बात सुनकर राजा तो पक्षियों को मँगाने को अकुला उठे। भला, ऐसी आश्चर्य उपजाने वाली बात सुनकर किसे ऐसी अपूर्व वस्तु की चाह न होगी? और इसीलिए महाराज ने मंत्री की बातों पर कुछ विचार न किया। उन्होंने उसी समय कुबेरदत्त को बुलवाया और सब बात समझाकर उसे रत्नद्वीप जाने को कहा। बेचारा कुबेरदत्त इस कपट-जाल को कुछ न समझ सका। वह राजाज्ञा पाकर घर पर आया और रत्नद्वीप जाने का हाल उसने अपनी विदुषी प्रिया से कहा। सुनते ही प्रियंगुसुन्दरी के मन में कुछ खटका पैदा हुआ। उसने कहा-नाथ, जरूर कुछ दाल में काला है। आप ठगे गए हो। किंजल्क पक्षी की बात बिल्कुल असंभव है। भला, कहीं पक्षियों का भी ऐसा प्रभाव हुआ है? तब क्या रत्नद्वीप में कोई मरता ही न होगा? बिल्कुल झूठ! अपने राजा सरल स्वभाव के हैं सो जान पड़ता है वे भी किसी के चक्र में आ गए हैं। मुझे जान पड़ता है, यह कारस्तानी राजमंत्री की हुई है ॥६-१७॥

कर्तुं समीहते तस्मा-त्तवेदं गमनं ध्रुवम्। क्वापि स्त्रियो भवन्त्युच्चैः स्वप्रियादतिचञ्चवः ॥१८॥
 श्रेष्ठी कुबेरदत्तोसौ समाकर्ण्य प्रियोदितम्। शुभे दिने विसृज्योच्चै-र्नलयानं सुबुद्धिमान् ॥१९॥
 स्वयं व्याघुट्य गेहे च प्रच्छन्नं संस्थितो द्रुतम्। लोकदुस्संगतेः क्वापि सन्तोसन्तो भवन्त्यमी ॥२०॥
 तदा कडारपिङ्गोसौ श्रेष्ठिनीरूपलम्पटः। कुधीस्तद्गृहमायातो मदनोन्मत्तमानसः ॥२१॥
 ततो वर्चोगृहे सापि पल्यकं रज्जुवर्जितम्। छादितं शुभ्रवस्त्रेण स्थापयामास सुन्दरी ॥२२॥

उसका पुत्र कडारपिंग महा व्यभिचारी है। उसने मुझे एक दिन मन्दिर जाते समय देख लिया था। मैं उसकी पापभरी दृष्टि को उसी समय पहचान गई थी। मैं जितना ध्यान से इस बात पर विचार करती हूँ तो अधिक-अधिक विश्वास होता जाता है कि इस षड्यंत्र के रचने से मंत्री महाशय की मंशा बहुत बुरी है। उन्होंने अपने पुत्र की आशा पूरी करने का और कोई उपाय न पाकर आपको विदेश भेजना चाहा है। इसलिए अब आप यह करें कि यहाँ से तो आप रवाना हो जायें, जिससे कि किसी को सन्देह न हो और रात होते ही जहाज को आगे जाने देकर आप वापस लौट आइये। फिर देखिये कि क्या गुल खिलता है। यदि मेरा अनुमान ठीक निकले तब तो फिर आपके जाने की कोई आवश्यकता नहीं और नहीं तो दस-पन्द्रह दिन बाद चले जाइयेगा ॥१७-१८॥

प्रियंगुसुन्दरी की बुद्धिमानी देखकर कुबेरदत्त बहुत खुश हुआ। उसने उसके कहे अनुसार ही किया। जहाज रवाना हो गया। जब रात हुई तब कुबेरदत्त चुपचाप घर आकर छुपा रहा। सच है, **कभी-कभी दुर्जनों की संगति से सत्पुरुषों को भी वैसा ही हो जाना पड़ता है** ॥१९-२०॥

जब यह खबर कडारपिंग के कानों में पहुँची कि कुबेरदत्त रत्नद्वीप के लिए रवाना हो गया तो उसकी प्रसन्नता का कुछ ठिकाना न रहा। वह जिस दिन के लिए तरस रहा था, बेचैन हो रहा था वही दिन उसके लिए अब उपस्थित हो गया तब वह क्यों न प्रसन्न होगा? प्रियंगुसुन्दरी के रूप का भूखा और काम से उन्मत्त वह पापी कडारपिंग बड़ी आशा और उत्सुकता से कुबेरदत्त के घर पर आया। प्रियंगुसुन्दरी ने इसके पहले ही उसके स्वागत की तैयारी के लिए पाखाना जाने के कमरे को साफ-सुथरा करवाकर और उसमें बिना निवार का पलंग बिछवाकर उस पर एक चादर डलवा दी थी। जैसे ही मन्द-मन्द मुस्कुराते हुए कुँवर कडारपिंग आए, उन्हें प्रियंगुसुन्दरी उस कमरे में लिवा ले गई और पलंग पर बैठने का उसने इशारा किया। कडारपिंग प्रियंगुसुन्दरी को अपना इस प्रकार स्वागत करते देखकर, जिसका कि उसे स्वप्न में भी ख्याल नहीं था, फूलकर कुप्पा हो गया। वह समझने लगा, स्वर्ग अब थोड़ा ही ऊँचा रह गया है। पर उसे यह विचार भी न हुआ कि पाप का फल बहुत बुरा होता है। खुशी में आकर प्रियंगुसुन्दरी के इशारे के साथ ही जैसे ही पलंग पर बैठा कि धड़ाम से नीचे आ गिरा। जब वहाँ की भीषण दुर्गन्ध ने उसकी नाक में प्रवेश किया तब उसे भान हुआ कि मैं कैसे अच्छे स्थान पर आया हूँ। वह अपनी करनी पर बहुत पछताया, उसने बहुत आरजू-मिन्नत अपने छुटकारा पाने के लिए की, पर उसकी इस अर्जी पर ध्यान देना प्रियंगुसुन्दरी को नहीं भाया। उसने पापकर्म का उपयुक्त प्रायश्चित्त दिये बिना छोड़ना उचित नहीं समझा। नारकी जैसे नरकों में पड़कर दुःख

यावत्तत्रोपविष्टोसौ शठो विष्टागृहे तदा। पतितो मंत्रिणः पुत्रो नारको नरके यथा ॥२३॥
 षण्मासेषु गतेषूच्चै-रागते जलयानके। नाना पक्षिमहापक्षान्कृत्वा तस्य शरीरके ॥२४॥
 विधाय तन्मुखं कृष्णं कृत्वा हस्तादिबन्धनम्। धृत्वा पंजरके कष्टं मंत्रिपुत्रं कुकर्मकम् ॥२५॥
 पक्षी कुबेरदत्तेन श्रेष्ठिना गुणशालिना। समानीतो महाद्वीपा-दिति क्षोभं गते जने ॥२६॥
 दुष्टं कडारपिङ्गाख्यं नीत्वा श्रेष्ठी नृपान्तिकम्। देव किंजल्कपक्षी ते समानीतोयमद्भुतः ॥२७॥
 इति हास्यं विधायोच्चैः पूर्ववृत्तान्तमुक्तवान्। तच्छ्रुत्वा नरसिहेन महाकोपेन भूभुजा ॥२८॥
 गर्दभारोहणं कृत्वा दण्डितो मंत्रिपुत्रकः। मृत्वा कडारपिंगोसौ दुर्ध्यानान्नरकं गतः ॥२९॥
 परस्त्रीलम्पटो जन्तु दुर्गतिं याति निश्चयात्। तस्मात्सदा परस्त्रीणां त्यागः कार्यो बुधोत्तमैः ॥३०॥
 ये भव्या श्रीजिनन्द्रोक्तं शीले शर्मशतप्रदे। महायत्नं प्रकुर्वन्ति ते पूज्यन्ते पदे पदे ॥३१॥
 शीलं श्रीजिनभाषितं शुचितरं देवेन्द्रवृन्दैः स्तुतं नाना शर्ममहाप्रमोदजनकं स्वर्गापवर्गप्रदम्।
 ये भव्याः प्रतिपालयन्ति नितरां त्रेधा जगन्मोहनं भुक्त्वा ते त्रिदशादिसौख्यमतुलं मुक्तेर्लभन्ते सुखम् ॥३२॥

इति कथाकोशे ब्रह्मचर्यदोषोद्भवकडारपिङ्गस्य कथा समाप्ता।

उठाते हैं, ठीक वैसे ही एक राजमंत्री का पुत्र अपनी सब मान-मर्यादा पर पानी फेरकर अपने किए कर्मों का फल आज पाखाने में पड़ा-पड़ा भोग रहा है। इस तरह कष्ट उठाते-उठाते पूरे छह महीने बीत गए। इतने में कुबेरदत्त का जहाज भी रत्नद्वीप से लौट आया। जहाज का आना सुनकर सारे शहर में इस बात का शोर मच गया कि सेठ कुबेरदत्त किंजल्क पक्षी ले आए ॥२१-२४॥

इधर कुबेरदत्त ने कडारपिंग को बाहर निकालकर उसे अनेक प्रकार के पक्षियों के पंखों से खूब सजाया और काला मुँह करके उसे एक विचित्र ही जीव बना दिया। इसके बाद उसने कडारपिंग के हाथ-पाँव बाँध कर और उसे एक लोहे के पिंजरे में बन्द कर राजा के सामने ला उपस्थित किया। पश्चात् कुबेरदत्त ने मुस्कुराते हुए यह कहकर, कि देव, यह आपका मँगाया किंजल्क पक्षी उपस्थित है, यथार्थ हाल राजा से कह दिया। सच्चा हाल जानकर राजा को मंत्री पुत्र पर बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने उसी समय उसे गधे पर बैठाकर और सारे शहर में घुमा-फिराकर उसके मार डालने की आज्ञा दे दी। वही किया भी गया। कडारपिंग को अपनी करनी का फल मिल गया। वह बड़े छोटे परिणामों से मर कर नरक गया। सच है, परस्त्री आसक्त पुरुष की नियम से दुर्गति होती है। इसके विपरीत जो भव्य-पुरुष जिनभगवान् के उपदेश किए और सुखों के देने वाले शीलव्रत के पालने का सदा यत्न करते हैं, वे पद-पद आदर-सत्कार के पात्र होते हैं। इसलिए उत्तम पुरुषों को सदा परस्त्री-त्यागव्रत ग्रहण किए रहना चाहिए ॥२५-३०॥

भगवान् के उपदेश किए हुए, देवों द्वारा प्रशंसित और स्वर्ग-मोक्ष का सुख देने वाले पवित्र शीलव्रत का जो मन, वचन, काय की पवित्रता के साथ पालन करते हैं, वे स्वर्गों का सुख भोगकर अन्त में मोक्ष के अनुपम सुख को प्राप्त करते हैं ॥३१-३२॥

३०. देवरतिराज्ञः कथा

नत्वा जिनं जगत्पूज्यं केवलज्ञानलोचनम्। कथा देवरतेर्वच्य विनितापत्तनेशिनः ॥१॥
 अयोध्या नगरे राजा जातो देवरतिर्महान्। रक्ता नाम्नी महाराज्ञी रूपसौभाग्यशालिनी ॥२॥
 स भूपतिः सदा तस्या-मासक्तः कामलम्पटः। शत्रुभिः पीडितश्चापि राज्यचिन्तां करोति न ॥३॥
 मुक्त्वा धर्मार्थनामानौ पदार्थौ नीतिवर्जितः। भुङ्क्ते भोगान्कुधीर्योत्र स स्याद्दुःखैकभाजनम् ॥४॥
 मंत्रिभिश्चैकदा पुत्रं जयसेनाभिधानकम्। राज्ये धृत्वा तया सार्द्धं देशान्निर्घाटितः प्रभुः ॥५॥
 तदा देवरतिः सोपि रक्तया सह भूपतिः। महादव्यां समायातो धिक्कामं नीतिवर्जितम् ॥६॥
 तत्र क्षुधामहाक्लेशपीडितायाः स्वयोषितः। स्वोरुमांसं सुसंस्कृत्य दत्तवान्मोहवञ्चितः ॥७॥
 तथा तस्यास्तृषाक्रान्तचेतसो मूढमानसः। बाहुरक्तं महौषध्या जलं कृत्वा च सन्ददौ ॥८॥
 यमुनायास्तटं प्राप्य रक्तां धृत्वा तरोस्तले। भोजनं च समानेतुं ग्राममध्ये नृपो गतः ॥९॥

३०. देवरतिराजा की कथा

केवलज्ञान जिनका नेत्र है, उन जग पवित्र जिनभगवान् को नमस्कार कर देवरति नामक राजा का उपाख्यान लिखा जाता है, जो अयोध्या के स्वामी थे ॥१॥

अयोध्या नगरी के राजा देवरति थे। उनकी रानी का नाम रक्ता था। वह बहुत सुन्दरी थी राजा सदा उसी के नाद में लगे रहते थे। वे बड़े विषयी थे। शत्रु बाहर से आकर राज्य पर आक्रमण करते, उसकी भी उन्हें कुछ परवाह नहीं थी। राज्य की क्या दशा है, इसकी उन्होंने कभी चिन्ता नहीं की। जो धर्म और अर्थ पुरुषार्थ को छोड़कर अनीति से केवल काम का सेवन करते हैं, सदा विषयवासना के ही दास बने रहते हैं, वे नियम में कष्टों को उठाते हैं। देवरति की भी यही दशा हुई। राज्य की ओर से उनकी यह उदासीनता मंत्रियों को बहुत बुरी लगी। उन्होंने राजकाम के सम्हालने की राजा से प्रार्थना की, पर उसका फल कुछ नहीं हुआ। यह देख मंत्रियों ने विचार कर देवरति के पुत्र जयसेन को तो अपना राजा नियुक्त किया और देवरति को उनकी रानी के साथ देश बाहर कर दिया। ऐसे काम को धिक्कार है, जिससे मान-मर्यादा धूल में मिल जाए और अपने को कष्ट सहना पड़े ॥२-५॥

देवरति अयोध्या से निकल कर एक भयानक वन में आए। रानी को भूख ने सताया, पास खाने को एक अन्न का कण तक नहीं। अब वे क्या करें? इधर जैसे-जैसे समय बीतने लगा, रानी भूख से बेचैन होने लगी। रानी की दशा देवरति से नहीं देखी गई और देख भी वे कैसे सकते थे। उसी के लिए तो अपना राजपाट तक उन्होंने छोड़ दिया था। आखिर उन्हें एक उपाय सूझा। उन्होंने उसी समय अपनी जाँघ काटकर उसका मांस पकाया और रानी को खिलाकर उसकी भूख शान्त की और प्यास मिटाने के लिए उन्होंने अपनी भुजाओं का खून निकाला और उसे एक औषधि बता कर पिलाया। इसके बाद वे धीरे-धीरे यमुना के किनारे पर आ पहुँचे। देवरति ने रानी को तो एक झाड़ के नीचे बैठाया और आप भोजन सामग्री लेने को पास के एक गाँव में गए ॥६-९॥